ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 276-278
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

"साहित्य में कला,संस्कृति का अंतर्संबंध "(जयशंकर प्रसाद)

दर्शना कुमारी

सहायक आचार्य, हिंदी विभाग– बी.डी.एम.म्यू. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय,शिकोहाबाद, फिरोजाबाद (उ0प्र0), भारत

Received- 10.11.2018, Revised- 16.11.2018, Accepted - 19.11.2018 E-mail: darshnakumari860@gmail.com

सारांश : *साहित्य का कला एवं संस्कृति का अंतर्संबंध अत्यंत घनिष्ठ है साहित्यकार अपनी रचनाधर्मिता कला एवं संस्कृति को आधार बनाकर करता है। साहित्य सत्यम् शिवम् सुंदरम् की परिकल्पना पर आधारित है। साहित्य शब्द की व्याख्या करते हुए हिंदी साहित्यकोष में रचनाओं ने लिखा है साहित्य–सहित्+यत् प्रत्यय। साहित्य का अर्थ है–शब्द और अर्थ का यथाभाव सहभाव अर्थात् 'साथ होना'। साहित्य से 'सहभाव' ध्वनित होता है। कुछ विद्वानों ने साहित्य में से 'सहित'(अर्थात् स+हित के साथ) को पृथक करते हुए हित–कारक रचना को साहित्य बताया है।*

आनंदवादी आचार्य मम्मट साहित्य के उद्भव को आनंद अनुभूति की परिणति मानते हैं सकल प्रयोजन मौलीभूतं समांतर मेल रसास्वाद समुदभूतं विगलित वेदयान्तरमानन्दनम्'। भामह, काव्य के उद्भव का कारण धर्म अर्थ काम मोक्ष तथा कला सर्जन में दक्षता एवं कीर्ति और प्रीति की प्राप्ति को मानते हैं।

प्रकृति की विशालता में व्याप्त जो ईश्वर यह सत्ता है वह मानव मन को सहज ही आकृष्ट करता है। उससे प्राप्त मानसिक गतिशीलता एवं आत्मिक आनंद की अभिव्यंजना जीवन सृष्टि के लिए परम आवश्यक है इसलिए साहित्य का उद्भव होता है।

कुंजीभूत शब्द– साहित्यकार, रचनाधर्मिता, परिकल्पना, साहित्यकोष, प्रत्यय, सहभाव, मौलीभूतं समांतर।

प्रसाद युग– 'चेतना प्रेरणा और प्रभाव जयशंकर प्रसाद ने अपने काव्य रचना में कला संस्कृति एवं ऐतिहासिकता समन्वय का सुंदर वर्णन किया है। उनके नाटकों में गीत के माध्यम से राष्ट्रीय संस्कृति एवं कला का बेजोड़ संयोग प्राप्त होता है। चंद्रगुप्त के आचार्य बीजगुप्त अर्थात कौटिल्य एक वैश्विक धरातल पर जोड़ने वाला गुरु रहा उनके नाटकों में भारतीय एवं यूनानी कला दर्शन के दृश्य दिखाई पड़ते हैं। प्रसाद का युग कई दृष्टियों से सामाजिक सांस्कृतिक आर्थिक और राजनैतिक क्षेत्र में नवीन परिवर्तनों का युग था। आजादी के समय स्वतंत्रता के स्वर को जगाने में अपनी सांस्कृतिक और अध्यात्म प्राणशक्ति को नवरचना में फूंक दी। प्रसाद का युग आध्यात्मिक मूल्यों तथा मानवतावादी दर्शन से बना था। प्रसाद युग व्यावहारिक और वैचारिक संघर्ष का युग था,जिसमें देश उठकर उस भावभूमि पर आ खड़ा हुआ था जहां प्राचीन नवीन और नवीन प्राचीन का साक्षात्कार करने में सक्षम था प्रसाद के काव्य की भांति नाटकों की चेतना भी युगीन है उनके शब्दों–'सिद्धांतों से ही इतिहास से अधिक कुछ नहीं करता क्योंकि यथार्थवाद इतिहास की संपत्ति है किंतु साहित्यकार ना तो इतिहासकर्ता है और ना धर्मशास्त्र प्रणेता। साहित्य इन दोनों की कमी को पूरा करने का काम करता है"।

उन्होंने वर्तमान को अतीत में प्रतिबिंबित और पुनर्जीवित किया है वे मान कर चलते थे–अतीत और वर्तमान को लेकर भविष्य का निर्माण होता है। जीवन की अनुभूति या दर्शन के समान ही सामयिक वातावरण तथा रचना विधान संबंधी नई अर्जित दृष्टि में भी प्रसाद के नाटकों का एक निश्चित संस्कार किया है। कुल मिलाकर युग मानस की अचेतन छाया दार्शनिक चिंतन और उनकी रूमानी प्रवृत्ति ने मिलकर उनके नाटकों के वाह्य और आंतरिक स्वरूप को प्रभावित किया है। प्रसाद इन तत्वों में से एक ऐसे संसार का निर्माण करते हैं जिसमें वे विद्यमान भी लगते हैं और अदृश्य भी।

प्रसाद ने इतिहास को एक ऐसी रहस्यमयी प्रक्रिया के रूप में स्वीकार किया है, 'जिसकी व्याख्या करने में वे उसी से सृष्टि–बीज से चलते हैं, जिसे उपनिषदों में काम या मूल इच्छा कहा है"। [1]

प्रसाद जी की मान्यता है कि "मानव और सामूहिक रूप से समाज उसी अनादि इच्छा की पूर्ति में, जाने या अनजाने में निरंतर लगे हुए हैं और अभिराम संघर्षों की श्रंखला के द्वारा मानो, वे उसी अनादि इच्छा की गहन गंभीरता या वरेण्यता को प्रकट कर रहे हैं। ऐसी सामूहिक चेतना धारा. ....मानव की अखंड प्रयत्न परंपरा की साक्षी है"। [2]

इतिहास के द्वारा उपलब्ध इतिवृत्त को सार्थकता और सोउद्देश्यता प्रदान करने के लिए प्रसाद ने अनुभूति के साथ–साथ कल्पना का सहारा लिया है और उससे कथानक का पर्याप्त आविष्कार और परिष्कार भी किया है। प्रसाद का अपना युद्ध स्वयं राष्ट्र की आशा आकांक्षाओं और स्वतंत्रता के संघर्ष का युग था जो एक नए इतिहास की दृष्टि के लिए आंदोलित था। इतिहास में मानव की विजय यात्रा में बार–बार

ऐसी घटनाओं की आवृत्ति हुई है। प्रसाद ने अपने नाटकों की कथावस्तु उन युवाओं से चुनी है, जिनमें स्वयं उनके अपने युग की समस्याएं और सपने समाहित थे। यही कारण है 'चंद्रगुप्त' 'अजातशत्रु' 'जनमेजय का नाग यज्ञ' 'स्कंदगुप्त' और ध्रुवस्वामिनी' में वे समसामयिक स्वतंत्रता संघर्ष जातिय और राष्ट्रीय एकता तथा शौर्य अथवा आत्म बलिदान की भावना का इतिहास के साथ सहज सामंजस्य स्थापित कर सके। 'अजातशत्रु' में गौतम की वाणी में गांधी के स्वरों की गूंज है और काशी के युद्ध की भयानकता में विश्वयुद्ध का सत्य युग मुखर हुआ है। इसी प्रकार 'ध्रुवस्वामिनी' में युग की नारी जागी है,तो 'चंद्रगुप्त' और 'जनमेजय का नागयज्ञ में युग व्यापी एकता की भावना प्रतिबिंबित हुई है। वर्तमान और अतीत के बीच इस संबंध सूत्र की पहचान होने के कारण ही प्रसाद के नाटकों की कथावस्तु उच्च स्तरों पर ऐतिहासिक होने के साथ–साथ आधुनिक अथवा समसामयिक भी प्रतीत होती है । उनके नाटकों का वातावरण सांस्कृतिक तो है ही इसके अतिरिक्त युगीन समस्याओं का हल प्रस्तुत करने की दृष्टि से भी उनका चिंतन अतीत की संस्कृति पर ही अधिक केंद्रित रहा है। उनके साहित्य में सामाजिक मूल्य दार्शनिक विचारों और सांस्कृतिक परंपराओं का सुंदर समन्वय हुआ है।उन्होंने अपने नाटकों में राजा के आदर्श सुशासन और न्याय की व्यवस्था और शासित के अधिकारों की अभिव्यक्ति भारतीय राजनीतिक सांस्कृतिक आदर्शों की पृष्ठभूमि में करने का प्रयास किया है। 'राजनीति के पीछे नीति से हाथ देने वालीश राजनीति की उन्होंने अपने सभी नाटकों में भर्त्सना की है। राजनीति हो रणनीति हो या व्यवहारिक जीवन विधि सर्वत्र उन्होंने नैतिकता को महत्व दिया है। 'विशाख', 'जनमेजय का नागयज्ञश तथा 'ध्रुवस्वामिनी' में शासक की दुर्बलता पर कठोर व्यंग हुए हैं। दूसरी ओर हर्ष चंद्रगुप्त स्कंद गुप्त आदि को त्राता के रूप में प्रस्तुत कर भारतीय संस्कृति आदर्श को उभारा गया है। भारतीय संस्कृति के अनुरूप ही प्रसाद ने अपने नाटकों में त्याग बलिदान और वीरता का आदर्श उपस्थित किया है ।उन्होंने वीरता को एक स्वाबलंबी गुण के रूप में ध्यान कर 'स्कंदगुप्त' और 'चंद्रगुप्त' में उसका भारतीय आदर्श प्रस्तुत किया है। शस्त्र बल की वीरता पैर की होती है यह मानते हुए उन्होंने सिकंदर हूंणो,शकों की पाशवशक्ति को वीरता की संज्ञा नहीं दी। उन्हें केवल हत्या व्यवसायी कहा है इसी प्रकार उन्होंने विश्व–मैत्री करुणा,त्याग, संयम आदि भारतीय–संस्कृति मूल्यों को अपने नाटकों में अभिहित किया है।'चंद्रगुप्त'में विराट एकता के सांस्कृतिक मूल्यों रहे हैं। 'स्कंदगुप्त' सांस्कृतिक नाट्यवस्तु में सर्वात्मा के स्वर में अपने व्यक्तित्व के विशिष्ट स्वर को समाहित कर देने का आग्रह मुखर हुआ है। न्याय का पक्ष भी सर्वत्र समर्थित हुआ है। 'धरुवस्वामिनी' में उसका समर्थन जिस रूप में हुआ है, वह भारतीय संस्कृति के व्यावहारिक पक्ष की ओर संकेत करता है। अपने नाटकों में विदेशी पात्रों के माध्यम से भारतीय संस्कृति का यशोगान वस्तुतः उनके इसी आस्था– भाव का परिणाम है। इस आधार पर यदि कहा जाए कि– "उनका नाटक साहित्य इतिहास और रोमांस के भीतर से नई सांस्कृतिक जागृति में सहायक हुआ है" [3]

अजातशत्रु में प्रसाद ने नारी की शक्ति की व्याख्या करने का प्रयास किया है जिस नारी स्वतंत्रय संबंधी विचारधारा का चरम विकास बाद में ध्रुवस्वामिनी में हुआ है। उसका श्री गणेश अजातशत्रु और जन्मेजय का नाग यज्ञ में ही हुआ है।

कठोरता का उदाहरण है पुरुष और कोमलता का विश्लेषण है स्त्री जाति। क्रूरता अनुकरणीय नहीं है उसे नारी जाति जिस भी स्वीकृत कर लेगी उस दिन समस्त सदाचारों का विप्लव होगा। यहां प्रसाद कहना चाहते हैं स्त्री ब्रह्मांड का स्वरूप होती है वह संसार की रचना करती है वह दयावान है इसलिए क्रूरता उसके लिए उचित नहीं है।

'जनमेजय का नागयज्ञ में आर्य और नाग जाति की संघर्ष के साथ साथ ब्राह्मण क्षत्रिय संघर्ष का भी रूप मिलता है तो वही 'अजातशत्रु' में स्पष्ट बौद्ध धर्म की महत्ता की संस्कृति को व्यक्त किया है। यहां एक बात देखें तो दोनों का एक आधार संघर्ष ही है । एक संघर्ष–जाति और दूसरे का राष्ट्र और परिवार की विश्रृंखल इकाइयां। व्यास महान सत्य धर्म का प्रचार करता और आस्तीक आर्य और नागरक्त लिए हुए दो कुध्द जातियों में शांति स्थापित करने और उन्हें प्रेम सूत्र में बांधने का प्रयत्न करता है। प्रसाद के संसार में सांस्कृतिक मूल्यों का चिंतन प्राप्त होता है। इतिहास के प्रसंग वस्तुतः संस्कृति के बहि–रंग हैं। संस्कृति स्वयं इतिहास की अतरंग चेतना है उन्होंने सांस्कृतिक आदर्श को उभारा है ।भारतीय संस्कृति के अनुरूप ही अपने नाटकों में त्याग बलिदान और वीरता का आदर्श स्थापित किया है।'अजातशत्रु में करुणा, जनमेजय का नागयज्ञ में सौहार्द के सांस्कृतिक मूल्य रहे हैं। प्रसाद के नाटकों का अंत करुणा विरागमय आनंद में होता है। समरसता और अखंड आनंद साधन प्रसाद का लक्ष्य अवश्य रहा है ,किंतु उसके लिए उन्होंने करुणा दुःख और अभाव को अस्वीकृत नहीं किया है। जयशंकर प्रसाद के नाटकों को त्रासदी से बचाने में उनकी संबंध में भावना का आग्रह मुख्य है वस्तुतः दो तीन अंकों तक नियति संघर्ष शौर्य और त्रास समाहार करने पर भी लें ,उनमें अंततः अपने युग के मूल्यों के साथ समझौता कर लेते हैं। प्रसाद की नाटकीय कथावस्तु में पर्याप्त त्रासद परिस्थितियों और चिंतन का समावेश हुआ है जीवन की क्षणभंगुर का देख कर भी मानव कैसी गहरी देना चाहता है और आकाश के नीले पत्र पर

ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-II, Issues-10 YEAR- Dec -2018

उज्जवल अक्षरों से लिखें अदृश्य के लेख उनका किस प्रकार उपहास करते हैं! नीला पर्दा जीवन के उत्थान पतन का रहस्य हैं (अजातशत्रु)। यह विवशता निरीह मानव के सामने जैसे असंख्य प्रश्नों के रूप में आती हैरू कोमल पत्तियों को जो अपनी डाली में निरीह लटका करती है प्रभंजन क्यों झंझोड़ता है? उसकी गति सम नहीं है ऐसा क्यों है?स्थान–स्थान पर वात्याचक्र क्यों है?वही मनुष्य क्या है ?प्रकृति का अनुचर और नियति का दास है या उसकी क्रीड़ा का उपकरण (नागयज्ञ)।संसार में जो सबसे महान है वह क्या है?(स्कंद गुप्त)।क्या समय स्त्री और पुरुष की गेंद लेकर खेलता है?वही मनुष्य के ह्रदय में देवता को हटाकर राक्षस कहां से घुस आता है (ध्रुवस्वामिनी)। क्या पृथ्वी तल रोने के लिए ही है?(चंद्रगुप्त)। यह विप्लव क्यों हो रहा है ?इतनी छीनाझपटी, इतना स्वार्थ साधन क्यों है कि सहज प्राप्त अंतरात्मा की सुख शांति भी खो रहे हैं?(अजातशत्रु)। मनुष्य व्यर्थ की अभावों की सृष्टि कर जीवन को दुःख मय में और जटिल क्यों बना लेता है?(कामना) अजातशत्रु, स्कंद गुप्त और चंद्रगुप्त में पुरुष पात्रों के जीवन की अतिथियों की भारी भीड़ हैं । चाणक्य और स्कंध के जीवन के अंतिम नाटकीय क्षण इस बात का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं अत्यधिक सुख में मरने वाले विम्बसार की मृत्यु, अधिकार की आहत भावना में त्याग का सुख प्राप्त करने वाले स्कंध की समरसता और अविश्वास ,कूट– चक्र और छलना के कंकाल तथा कठोरताओं के केंद्र चाणक्य की त्यागमयी ममता में एक विचित्र ढंग की पीड़ा निहीत है, वस्तुतः अपने नाटकों के अंत की योजना में प्रसाद ने जहां समरसता को महत्व दिया है वहां त्रासदी की भावना को भी उभारा है इस प्रकार कथावस्तु का संस्कार करते हुए कामदी के साथ त्रासदी को नहीं भूले हैं दोनों के घुले मिले रंग हैं। इसलिए उनके नाटकों को त्रासदी और कामदी के शास्त्रीय विधान से भिन्न रूप में दे देते हैं। इसलिए उनके नाटकों को ना पूर्णता सुखांत कहा जा सकता है और ना दुःखांत ही।

समाज शिक्षा से संभवतः प्रसाद जी का अभिप्राय ऐसे संदेश से है जो एक विशेष योग एवं समाज के लिए तो उपयोगी हो सकता है किंतु समस्त विश्व के लिए उसकी सार्थकता नहीं होती नाटक में नाटकार का ह्रदयगत रस भी निहित रहता है। ह्रदय को रसाभिभूत करने के साथ–साथ दृश्य काव्य मानव के ह्रदय में आदर्श मूल्यों की उद्भावना भावना भी करता है, यह प्रसाद जी का निश्चित मत है उदाहरण – "जो नाटक मनोभाव का विश्लेषण करके चमत्कार के बल से मोहता हुआ अंतः करण में आदर्श सत्य को अपने यहां विकसित कर देता है उस "प्लेटो के आदर्श प्रजातंत्र" को छोड़कर सब जगह सबवे जातियों के साहित्य में सम्मान मिला है।"प्रसाद जी ने सभी साहित्य रूपों में लोक संस्कार की सिद्धि पर बल दिया है किंतु दृश्य काव्य में उन्होंने इसकी अनिवार्यता का निरूपण किया है इस संबंध में उनकी धारणा है–"शिक्षा का अंश साहित्य के सब अंशों से संबंध रखता है अतः वह अंश रुप से प्रायः सत्कविता में मिलेगा। वह नाटकों के विशेष रूप से रहता है, इसी से काव्य मात्र में इसकी बड़ी मर्यादा है।" [4]

यह सर्वविदित सिद्धांत है कि नाटक द्वारा शिक्षा का प्रभाव त्वरित एवं स्थाई होता है प्रसाद जी ने राय अपने आरंभिक नाटकों के अंत में लोक मंगलकारी काव्य पंक्तियां लिखी हैं जिनसे उपरिचर्चित नाट्यफल की पुष्टि होती है। अथवा परोक्ष में उक्त नाट्यसिद्धि का अनुमोदन करने वाली उक्तियां इस प्रकार हैं–

"प्रेम– प्रचार रहे जगती तल दया दान दरसे। मिटे कलह शुभ शांति प्रकट हो अचर और चर से"। [5]
सुख सों पूरि रहै पुहुमी यह, नित नव मंगल होवे"। [6]

इन उदाहरणों के माध्यम से प्रसाद जी ने नाटककृति के माध्यम से अंधकार निराशा रुदन दुःख द्वंद्वकलह आदि के निराकरण एवं करूणा, स्नेह ही शांति धर्म तथा आनंद के प्रसार की सद्भावना व्यक्त की है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. डब्ल्यू बी इट्स डिस्कवरीज–1906.
2. हीगेल लेक्चर ऑन द फिलॉसफी ऑफ हिस्ट्री अनुवाद– जे. सिब्री पेज नं–66.
3. नंद दुलारे वाजपेई– जयशंकर प्रसाद पेज नंबर–3.
4. जयशंकर प्रसाद– इंदु ज्येष्ठ शुक्ल 2 संवत् 1967 पेज–109.
5. जयशंकर प्रसाद–राजश्री–पेज–70.
6. जयशंकरप्रसाद–चित्राधार पेज–113.

*****